जून दो हजार छः सरिता मे प्रकाशित

नरायन सिंह

बिना बुलाये नरायन सिंह हमारे घर पर कभीं नही आते थे.गोकि हमारे घर पर उनके आने पर किसी प्रकार का कोई प्रतिबन्ध न था।एक दिन दोपहर के वक्त बावूजी खाना खाकर उठे ही थे कि अचानक नरायन सिंह को अपने सामने पाकर एक बार उन्हे भी विस्मित होना पड़ा।मॉ रसोई घर से निकल कर बावूजी के पास जा पहुंची।हमारे सारे भाई वहन भी दरवाजे पर जा डटे थे।

नरायन सिंह मेरे पिताजी के तहत एक मामूली से चौकीदार थे.लेकिन मेरे पिताजी को वो अपने बड़े भाई की तरह मानते थे।इस बात को मेरे पिताजी ही नही.बल्कि पूरा धनवाद शहर जानता था।हमारी मॉ भी इस बात को जानती थीं.पर नरायन सिंह ने कभीं उन्हे अपने व्यक्तिगत सम्वोधनों के ऊहापोहों मे नही डाला।वो पिताजी को साहव और मॉ को मेमसाहव ही कहके बुलाते थे।हमे भी उन्होने वावू भतीजे के ववाल से अलग ही रखा था।यहॉ तक कि वो हमारे नामो के पीछे जी भी लगाते थे।

वो पिताजी के सामने चुपचाप अपनी नजर नीचे किये खड़े थे।मॉ कमरे मे आकर विस्तर पर बैठ गई।नरायन सिंह से कुछ कहते ही न बन रहा था।पहली वार हम सभी उन्हे इतना बेवश और उदास देख रहे थे।

अव पिताजी से न रहा गयाःवाल वच्चे तो ठीक हैं न!

इसका जवाव भी उन्होने अपना सिर हिला कर ही दिया।

ःगॉव से कोई बुरी खवर आई है!

ःनही साहव!वस भईया पता नही किस वजह से मेरे परिवार को साथ रखना नही चाहते।बंटवारा करना चाहते हैं।बच्चे छोटे हैं और घर वाली से तो खेती का काम सम्हलने से रहा।परिवार को धनवाद ही ले आना पड़ जाएगा साहव।

पिताजी भी सोच मे पड़ गए।उन्हे पता था कि नरायन सिंह की तनख्वाह कितनी है!धनवाद मे वो भले ही अपने एक कमरे के सरकारी क्वार्टर मे छ जनो को अंड़ेस लें.पर वो अपने चार सौ रूपये की मासिक तनख्वाह से अपने परिवार का पेट पालने से रहे।

पिताजी के सामने एक वो इन्सान खड़ा था जिसने उनके लिए न दिन को कभीं दिन समझा न रात को रात।लोग वाग नरायन सिंह को पिताजी का शैडो कहते थे।पिताजी की समझ मे ही न आ रहा था कि वो उनकी किस तरह से मदद कर सकते हैं।सरकारी नौकरियों मे सभी के हॉथ बंधे होते हैं।पक्षपात के स्कैन्डलों से सभी को डर लगा रहता है।नरायन सिंह के लिए एक बड़ा मकान पैदा करना या उनकी तनख्वाह वढवा देना मेरे पिताजी के अधिकार मे तो था.पर ये उनका स्वभाव न था।वो वेदाग रिटायर होना चाहते थे।

नरायन सिंह भी इस बात को जानते थे।वो ये उम्मीदें लेकर हमारे पास आए भी न थे।उन्हे कुछ पैसों की जरूरत थी।

दस हजार रूपये सुनकर हम सभी चौंके.विशेषकर मॉ।मॉ ये जानना चाहती थीं कि इतने रूपये उन्हे क्यों चाहिये।पिताजी मॉ को चुप करवाकर उठे और दस हजार रूपये का एक चेक भर कर नरायन सिंह के हॅाथ पर रख दिये।

अव मॉ का भुनभुनाना शुरू हुआ।हमारी मॉ के शव्दकोष मे कृतज्ञता शव्द था ही नही।पिताजी के तहत सभी को वो अपना नौकर ही समझती थी।किसी का एहसान वो मानना ही नहीं चाहती थीं।

अपने पूरे जीवन मे वस एक बार नरायन सिंह ने पिताजी से कुछ मांगा था.वरना जीवन भर वो हमारे लिए सदा एक पैर पर खड़े रहे।एक तरह से उन्होने पिताजी को हर तरह के पारिवारिक ववालों और झंझटों से परे कर रखा था।ट्रेनो मे रिजर्वेसन्स.हमारे एडमिशन्स.डाक्टर बैंक यहॉ तक कि कचहरी मे गवाही भी वो पिताजी के नाम से दे आते थे।जव हम गर्मी की छुट्टियों मे गॉव आ जाते थे.तव पूरे घर गृहस्थी की रखवाली उन्ही के हॉथो मे होती थी।वो हमारी कोठी के समीप ही रहते थे।छोटे से छोटे.बड़े से बड़े काम के लिए कोई न कोई उन्हे बुलाने चल पड़ता था।

अपनी सीमित आय मे भी वो एक वेहद सम्मानित जीवन जी रहे थे।गोकि पहनने ओढने के नाम पर उनके पास दो धोतियॉ.दो कमीजें और एक जोड़ी जूता भर ही था.पर उनकी कमीजें हमेशा धूली और जूता चमकता रहता था।ठंढ के दिनों मे वो एक ऊनी बंडी पहनते थे।घर पर वो एक सफेद लुंगी और पूरे वॉह की वनियान पहने अपने छोटे से वगान मे लगे रहते थे।उनके घर मे भी एक चौकी के अलावे और कुछ न था।वरामदे के ताखे पर दो चार मॉजे कांसे के वर्त्तन.ताखे के नीचे लकड़ी के एक स्टैन्ड पर धरा ढक्कनदार घड़ा.आंगन मे नलके के नीचे लोहे की वाल्टी।वस यही था उनके पास गृहस्थी के नाम पर।अपने दो वक्त का खाना वो स्वयम अपने हॉथों बनाते थे।

यूनिवर्सिटी मे पिताजी वर्षो तक दो हॉस्टलों के वार्डन और कैम्पस के केयर टेकर रहे।इन पदों के लिए उन्हे अतिरिक्त पैसे तो न मिलते थे.पर उनके अधीन सैकड़ो माली मज़दूर और मेस्तर काम करते थे।कुछ विशेष कामों के अलावे सारी सरदर्दी पिताजी नरायन सिंह और रामधनी को सौंपे हुए थे।भाग दौड़ के लिए उन्हे रेले की सरकारी सायकलें मिली हुई थीं।

हमारे घर पर भी चार सरकारी नौकर डटे रहते थे।एक के जिम्मे गायें.दूसरे के जिम्मे वगान.तीसरे के जिम्मे खरीददारियॉ और चौथा मसाले पीसता रहता था या आंटे गूंथता रहता था।रामधनी सरकारी स्वीपर्स भेज कर हमारे घर के पाखाने से लेकर नालियॉ तक चमकवाता रहता था।

इस राजसी ठाट वाट मे हमारा वचपन गुजर रहा था।

इन्डियन स्कूल ऑफ माईन्स धनवाद केन्द्रीय सरकार के अधीन था.पर स्वायत न हुआ था।इसके तत्कालीन निदेशक प्रो दीना नाथ प्रसाद थे।पन्द्रह वर्षो तक वो अपना पद सम्हाले।कैम्पस मे जहॉ देखो.वहीं रामराज्य था।ऑफिस के क्लर्कस वजाय ऑफिस जाने के दिन भर आसपास की गुमटियों पर अडा मारे रहते थे।जो दो चार ऑफिस जाते भी थे.वो दिन भर टेवुलों पर पैर पसारे इधर उधर की वहसों मे लगे रहते थे।रात के चौकीदार तो

अपनी खटिया और मच्छरदानिया तक लेकर अपनी डयूटी पर सोने जाते थे। माली अपनी खूरपियॉं हॉंथ मे लिये किसी मोरपंखी के नीचे सोये रहते थे। छ सौ छात्रों के नाम पर हजारों लोग जी रहे थे। निदेशक दीना नाथ प्रसाद नाम से ही नही, बल्कि हर अर्थो मे दीनों के नाथ थे। बिना किसी भेद भाव के तमाम प्रदेशों से आये लोग प्रेम भाव से अपना जीवन यापन कर रहे थे।

उनके रिटायर होने के बाद दो वर्षो तक डाक्टर सरकार उनका पद सम्हाले। कैम्पस का जीवन अप्रभावित रहा, रामराज्य बना रहा जो अपनी पराकाष्ठा पर पहुॅच कर अपने अन्तिम दिन गिन रहा था। नए निदेशक बनकर अब डाः मरवाहा आये जो इस कॉलेज के छात्र भी रह चुके थे। वो ढेर सारे प्लान्स अपने साथ लेकर आये थे जिसमे सर्वप्रमुख था रामराज्य का अन्त। केन्द्रीय सरकार का वरद हस्थ उनकी पीठ पर था। उनकी उपलब्धियॉं नकारी नही जा सकतीं, पर कैम्पस की मौलिकता से भी वो डटकर खेले। जातियता, प्रान्तीयता, चापलूसी, स्वार्थ दवाके कैम्पस मे पनपा। पिताजी से उनके आनरेरी पद तो लिये ही गये, हमसे हमारी पुरानी सरकारी कोठी भी छीन ली गई। हम गोबिन्दपुर रोड के एक मामूली से क्वार्टर मे आ गये। पिताजी तो ये सब झेल लिए, पर नरायन सिंह पर इन्ही दिनों दो गाजें एक साथ गिरीं:उनके बड़े भाई बॅटवारे की जिद़ पकड़ बैठे और डाः मरवाहा उन्हे सरकारी वर्दी पहनवाकर एक मामूली सा चौकीदार बना बैठे और उन्हे एक तरह से समझा भी दियेःतुम एक मामूली से चौकीदार हो और यही तुम्हारी हैसियत है।

नरायन सिंह अपनी खाकी वर्दी पहनकर रजिस्ट्रार साहब वाले गेट की गुमटी पर जा बैठे। आते जाते प्रोफेसरों और लेक्चररों को देखते ही उठकर सलाम करते थे।

हम बड़े हो चले थे। पिताजी के हमारे प्रति ढेर सारे दायित्व खत्म हो चले थे। अब छोटे मोटे काम हम खुद ही सम्हाल लेते थे। नरायन सिंह को बुलवाना न पड़ता था। ट्रेनो मे रिजर्वेशन्स हम स्वयम करवा लेते थे। घर के मेहमानो को स्टेशन से ले आना या उन्हे स्टेशन पर छोड़ आना हमी मे से कोई कर लेता था। नरायन सिंह सिर्फ पिताजी को स्टेशन पर छोड़ने या लेने जाते थे। जब तब वो पिताजी से कहते भी थेःमरवाहा साहब को ये भ्रम है कि वो मुझे आपसे अलग कर दिये हैं।

नरायन सिंह के पास एक मोती नामका बड़ा खूंखार अल्सीसियन कुत्ता था, जो उनके एक इशारे पर ऊॅची से ऊॅची दीवारें तक लांघ जाता था। वो उसे बड़ा मानते थे। बाद के दिनो मे मुझे एक और बात का पता चला कि उनके पास एक गैर कानूनी सिक्सर भी था, जो वो तभी अपनी धोती मे खोंसते थे, जब उन्हे रात बिरात पिताजी को स्टेशन पहुॅचाना या वहॉ से वापस ले आना होता था।

उनका परिवार छपरा से धनबाद आ गया। उन्हे पॉच बेटे थे। सबसे बड़ा बेटा तेरह वर्ष का था और सबसे छोटा तीन वर्ष का। एक कमरे का क्वार्टर खचाखच भर गया। उनके क्वार्टर के सामने से कैम्पस की एक नीची दीवार जाती थी जिसके पीछे वो थोड़ी बहुत जमीन घेर घार कर एक छोटा सा बगान कर रखे थे। दीवार के पीछे मीलों दूर तक की जमीने लावारिस थीं, जो जन्गली झाड़ियों और पुटुसों से भरी पड़ी थीं। नरायन सिंह दीवार से लगाकर ही एक लम्बी सी मंड़ई डलवा कर उसी मे रहने लगे। उनके चार बच्चे एक सरकारी स्कूल मे जाने लगे।

एक दिन हमारी मॉ हमारे छोड़े कपड़ो की एक गठरी बना कर उनके यहॉं भिजवाने वाली ही थी कि अचानक पिताजी की नजर उस पर पड़ गई

ःइस गठरी मे क्या क्या बॉधे बैठी हो! किसके लिये ये है!

ःबच्चों के छोड़े कपड़े हैं। नरायन सिंह के यहॉं भिजवाने वाली हूँ।

अब पिताजी का गुस्सा भड़काःबॉट दो इन्हे धईया के गरीब बच्चो मे। नरायन सिंह के पूरे परिवार को घर पर बुलाकर खाना क्यों नही खिलवाती हो!क्यो नही उसकी पत्नी को देवरानी की तरह स्वीकारती हो!जब देखो तुम उसके आत्म सम्मान और उसकी खुद्दारी से खिलवाड़ करती रहती हो। क्यों नही तुम उसके बच्चों को बुलवाकर अपने बच्चों के साथ खेलने देती हो!आज तुम बच्चों के छोड़े कपड़े उसके पास भिजवा रही हो, कल तुम उसके यहॉ घर के जूठे खाने भिजवाओगी। मै नरायन सिंह और अपने सगे भाईयों तक के बीच कोई अन्तर नही समझता। ये तुम जानते हुए भी अनजान बनी बैठी रहती हो।

मॉ की तो बोलती ही बन्द हो गई।

नरायन सिंह दीवार के पीछे की थोड़ी और जमीन साफ सूफ करवाकर दो गायें खरीद लिये। उनकी देख भाल एक ग्वाला करता था, जिसे वो अपने गॉव से लेकर आये थे। बंटवारे के बाद वो अपने हिस्से की जमीन अपने बड़े भाई को अधिया पर दे आये थे। थोड़ा बहुत गल्ला गॉव से भी आने लगा था। उनका ग्वाला कैम्पस मे ही प्रोफेसरों और लेक्चररों के घर खांटी दूध दे आता था। बहुत कम समय मे ही नरायन सिंह का धन्धा ऐसा पनपा कि अब उनके पास दस गायें और सात भैसें थी। मेल मिलावट वो जानते ही न थे। उनके घर के सामने दूध खरीदने वाले कतारों मे खड़े हो जाते थे। उन्होने सूद पर पैसे भी लगाना शुरू कर दिया और साथ ही साथ हीरापुर मे एक मिठाई की दुकान भी खोल लिये। लक्ष्मी उनके जीवन मे पैसों की वो वर्षात लेके आई कि सावन भादो का हमे तो अन्त ही न दिखता था।

पुलिस लाईन के ठीक सामने उनका एक दो मंजिला मकान तक बन गया। नरायन सिंह सपरिवार सव्यवसाय अपने नये मकान मे आ गये और स्कूल ऑफ माईन्स के कैम्पस और अपने एक कमरे के क्वार्टर को अल्विदा कहा। पिताजी से लिये दस हजार रूपये वापस करने मे उन्हे एक वर्ष भी न लगा। जैसे सकुचाते वो पैसे मांगने आए थे वैसे ही सकुचाते वो दस हजार रूपये पिताजी के सामने धर गए। जाने से पहले वो बस इतना ही कह गएःबहुत बरकत है साहब आपके पैसे मे।

इन तमाम बातों के बावजूद वो अपनी नौकरी नही छोड़े, जो अब उनके लिए बिल्कुल बेमानी हो चली थी। वो खुद ही अपने अधीन काम करने वालों मे हजारों की तनख्वाहें बांटते थे, पर स्वयम चार सौ रूपल्ली के लिए वर्दी पहन कर रजिस्टार साहब वाले गेट की गुमटी मे आ बैठते थे।

उनका बड़ा बेटा मिठाई की दुकान देखने लगा। दूसरे बेटे के लिए वो पुलिस लाईन मे ही एक जेनरल स्टोर की दुकान खुलवा दिए। उनके गॉव से दो और ग्वाले आ गए। पुलिस लाईन से लेकर कचहरी तक शायद ही ऐसी कोई दुकान हो, जहॉ उनके फार्म का दूध न जाता हो। वो अपना व्यवसाय बढाते ही चले जा रहे थे। समय के साथ उनकी दो डम्परें भी खदानो मे चलने लगीं। फिर उन्होने इकठ्ठे चार ट्रक भी खरीद लिया। उनका व्यवसाय बिना किसी व्यवधान के चलता रहे, उन्हे धनबाद के राजनैतिक यूनियनों मे भी अपनी दिलचस्पी दिखानी पड़ी। अब उनके पास समय की किल्लत ही किल्लत थी।

एक दिन वो अपनी चार जोड़ी वर्दी बॉधे और ले जाकर डाः मरवाहा के टेवल पर ये कहके फेंक आएःएक बार आप ही मुझसे कहे थे कि मै एक चौकीदार हूॅ और मुझे अपनी हैसियत नही भूलनी चाहिये।मै अपनी हैसियत कभीं न भूला।बस आपकी ये वर्दियॉ तंग हो गई है।ये जिसके माप की हों उसे दे दीजिएगा।

हमारे घर का चक्कर वो सप्ताह मे तीन चार बार लगा ही जाते थे।सब कुछ के बावजूद न उनका न स्वभाव बदला था और न उनकी पोशाक ही।वही धोती. वही कमीज. वही जूता।वो पिताजी के सामने बैठते तक न थे।खड़े ही खड़े अपना हालचाल बता जाते थे।हमारे घर पर खाना तो दूर एक कप चाय तक न पीते थे।होली मे वो हमारे पहले मेहमान होते थे।ये क्रम वो पिताजी के रिटायर होने तक न तोड़े।हम सोये रहते थे. तभी वो अपनी जेब मे गुलाल लिए आ धमकते थे।मॉ को वो दूर से ही हॉथ जोड़कर नमस्ते कर जाते थे. पर पिताजी के गालों पर गुलाल रगड़कर उनसे गले मिलते थे।बड़ा कहने सुनने पर एक गुझिया लेकर चले जाते थे।अपनी हैसियत का रत्ती भर भी भान वो हमारे घर पर न होने देते थे।डींगें हॉकना तो ऐसे भी उनके स्वभाव मे न था।

पिताजी का रिटायरमेंट समीप आता जा रहा था।उन्होने अपने कैरियर मे सैकड़ों बहालियॉ अपने हॉथों की थी।इन चालीस वर्षो मे कई उनके दोस्त वने. कई उनके दुश्मन. पर फेयरवेल की शाम बस उनकी प्रशस्ति ही गाई जा रही थी।सिनेमा हॉल प्रोफेसरों. लेक्चरारों. क्लर्को और मज़दूरों से खचाखच भरा था जिनमे हर जाति के. हर प्रदेश के लोग थे।हर तबके से उन्हे उपहार मिल रहे थे।मै भी दर्शकों के बीच बैठा हुआ था।इस बिदाई के अवसर पर दो बड़े मार्मिक दृश्य आए।बगूला के तकरीवन दस ग्वाले मेरे पिताजी के अधीन स्पोंटस डिपार्टमेन्ट मे काम करते थे. जिनका हेड छोटू नाम का छोटा कुवड़ा आगे आगे एक ब्रीफकेस अपने हॉथ मे लिए स्टेज की तरफ जा रहा था और उसके पीछे अकलू मिसिर अमीन मदन मोती सिदाम सोनाराम भीम और दुर्गा।स्टेज पर छोटू से एक शब्द तक न बोला गया।पूरा हॉल तालियों से गूॅज रहा था और ये दसो बच्चों की तरह फूट फूट कर रो रहे थे।पिताजी समान्य वने रहे।उनकी समान्यता तब टूटी. जब नरायन सिंह एक मूठ वाली छड़ी लिये स्टेज पर आए और पिताजी के हॉथो मे अपनी छड़ी पकड़ाकर बस इतना ही कह पाएःईश्वर करें कि आपको इस छड़ी की जरूरत कभीं न पड़े।ये कहके अपनी धोती से वो अपनी ऑखें पोंछने लग पड़े।पिताजी रोने के स्वर मे हॅसने लग पड़े।पूरे हॉल मे शायद ही ऐसा कोई होगा जिसकी ऑखें न भर आई हों।

ये हृदयविदारक विदाई मेरे पिताजी की वर्षो की कमाई थी।

हमारे घर के सारे सामान बॉधे जा चुके थे।नरायन सिंह अपनी चार ट्रकों मे घर के सारे सामान लदवाये जा रहे थे।वो सामानो मे कटौती होने ही न दे रहे थे।गायों. बछडों. गमलों. टीनो पतरों से ही दो ट्रक भर चले थे।टोकने पर बस इतना ही कहते थेःधनबाद मे ऐसा कोई भी सामान नही रहेगा जिससे साहव और मेमसाहव की यादें जुड़ी हों. भले ही मुझे किराये का ट्रक ही क्यों न लेना पड़ जाय।

आधे से ज्यादे धनवाद का मजमा हमारे घर के आसपास आ जुटा था।रविवार का दिन था।दिन के एक बजे पिताजी ने धनवाद को अल्विदा कहा।नरायन सिंह की सफेद एम्बेसडर मे पिताजी मॉ और बड़ी भाभी के साथ जा बैठे और हम उनकी ट्रकों मे।नरायन सिंह अपनी गाड़ी धईया की तरफ मोड़े।उनके पीछे चारों ट्रकें चल पड़ीं।रजिस्ट्रार साहब वाले गेट से होकर पोस्टऑफिस. गोलबगान. ओल्डहॉस्टल. एल ब्लॉक होते हम अपनी पुरानी सरकारी कोठी से विदा लेते धईया रोड पर आ गये जहॉ से जी टी रोड अब ज्यादे दूर न था।अब हमारे सामने सतरह अट्ठारह घन्टों का सफर था।

नरायन सिंह हमे हमारे गॉव भोजापुर पहुॅचा कर बस एक दिन हमारे साथ गॉव मे रहे और चाचा से एक टोकरी लंगड़ा आम ले कर धनवाद वापस लौट गए।किराये खर्चे पेट्रोल के पैसे के बारे मे उनसे पूछने की हिम्मत मेरे पिताजी तक न जुटा पाये।

सारी सुविधाओं के वावजूद पता नहीं मॉ का मन गॉव मे क्यों न लगा!जहॉ तक मेरा ख्याल है भोजापुर की धूल धक्कड़ों. कीचड़ो. मच्छरों और मक्खियों से उन्हे उतनी परेशानी न थी।बस उन्हे एक बात खल रहा था कि पिताजी अपनी चालीस वर्षो की नौकरी के बावजूद एक चार कमरे का मकान तक शहर मे न बनवा सके और उन्हे चालीस वर्ष शहर मे रख कर बुढापा काटने गॉव मे ला पटके।धनबाद मे कभीं मिसेस वर्मा. कभीं मिसेस अग्रवाल तो कभीं मिसेस रावत और यहॉ गॉव मे फलाना वो तो फलाने की फलानी।एक ढंग की साड़ी पहनने के लिए उन्हे किसी के मुंडन का या फिर किसी शादी ब्याह का इन्तजार करना पड़ जाता है।अब उन्होने पिताजी के नाक मे दम करना शुरू कर दिया. जो उनकी एक बहुत ही बड़ी भूल थी।

मॉ को बनारस बड़ा रास आया. पर पिताजी के चेहरे पर झुर्रियॉ घहराती ही चली गई।बचपन मे नमक और कडुआ तेल से उनके मॉजे दॉत धनवाद मे ही हिल डुल रहे थे. जब वो चालीस वर्ष के भी न हुए थे।पैंसठ वर्ष की उम्र मे उनकी एक भी दॉत असली न थी।वगैर नकली दॉतों के वो कुछ बोल तो लेते थे. पर उन्हे समझना बड़ा कठीन होता था।जब उनसे भोजापुर छुड़वाया गया तो वो एक तरह से विरक्त ही हो चले थे।उन्होने शादी ब्याह नेवता हॅकारी आदि अवसरों पर भी जाना बन्द कर दिया।उनका दो शौक गाय और बागवानी मै बचपन से ही देखता आ रहा था. वो उसी मे रम गए।उनके दो परम मित्र डाः जगदेव सिंह और डाः रिपुदमन सिंह भी रिटायरमेन्ट के बाद बनारस मे अपना निजी मकान बनवा कर सपत्नी अपना बुढापा काटने आ पहुॅचे थे।प्रारम्भ मे ये दोनो सुवह शाम हमारे घर पर आ धमकते थे फिर पिताजी उनके साथ बिड़ला विश्वनाथ मन्दिर तक घूम आते थे।पता नही इन्हे इनकी किन निराशाओं ने तोड़ रखा था कि अपना सब कुछ ये अपनी पत्नियों के हॉथों मे सौंप कर असामयिक इस संसार को विदा कह गए।पिताजी को इन दोनो मित्रों की विदाई भी एक हद तक तोड़ी।

कभीं कभार धनवाद से उनके एकाध परिचित काशी हिन्दू विश्वविद्यालय मे एल्सटर्नल बनके आते थे और हमारे घर पर अपनी मेहमाननवाजी करवा जाते थे. पर पिताजी को मैने बस दो ही मेहमानों के साथ ठहाके लगाते सुना।गई रात तक वो नरायन सिंह और अपने सगे भाई के साथ बैठे रह जाते थे।पता नही वो किन विषयों पर बातें करते थे! किन बातों पर ठहाके लगाते थे!

पिताजी और नरायन सिंह के बीच न कभीं शिक्षा की कोई दीवार रही न किसी हैसियत की।इससे अच्छी शिक्षा न मुझे अपने जीवन मे मिली और न उनके नरायन सिंह के साथ लगाये ठहाके से मधुर संगीत ही सुनने को मिला।

समय के साथ मात्र नरायन सिंह अकेले पूरे धनवाद का प्रतिनिधित्व करते रहे. जहॉ पिताजी अपना चालीस वर्ष गुजारे थे।दूसरे सम्बन्ध प्रायः सो चुके थे।ये रिक्तता हर नौकरीपेशे लोगों के जीवन मे आती है. पिताजी के जीवन मे भी आई।

नरायन सिंह का विस्तृत व्यवसाय उनके वेटे सम्हाले हुए थे और वो हर महीने ही बनारस का चक्कर मारा करते थे।रिटायर होने के बाद पिताजी

धनबाद एक बार भी न गये।
मुझे व्यक्तिगत बनारस से पिताजी ही जोड़ रखे थे।उन्हे मै सविस्तार नियमित रूप से पत्र लिखता रहा.जिसका मुझे हमेशा अविलम्ब जवाब मिलता रहा।अपने किसी भी पत्र मे मै उनसे नरायन सिंह के बारे मे पूछना कभीं न भूला।उन्हे मैने हमेशा अपना सादर चरणस्पर्श ही भेजा।
सन अन्ठानबे मे मुझे पिताजी के ही एक पत्र से नरायन सिंह के हर्ट अटैक का समाचार मिला।उनकी जान तो बच गई.पर डाक्टरों ने उन्हे कम्पलीट बेड रेस्ट की सलाह दी।कई सप्ताह वो बोलने चालने की हालत मे न थे।जब वो थोड़ी समान्यता की ओर लौटे तो अपने बड़े बेटे अमरीश के हॉथों पिताजी के नाम एक छोटा सा पत्र लिख कर उसे अपनी गाड़ी से तत्काल बनारस भेजे।पिताजी के हॉथ का कौर हॉथ मे धरा का धरा रह गया।बिना हॉथ मुँह धोये वो गाड़ी मे जा बैठे।बड़ी मुश्किल से उन्हे गाड़ी से उतरवाया गया।ड्राइवर वापसी की हालत मे न था।सतरह अट्ठारह घन्टे के सफर के बाद नींद से उसकी ऑखें तक जल रही थीं।
दूसरे दिन सुबह ही गाड़ी धनबाद की ओर दौड़ पड़ी।पिताजी धनबाद मे अपना तीन दिन गुजार कर बड़े बुझे मन से बनारस वापस आए।उनकी भूख ही जैसे मर चली थी।एकाध कौर खाकर वो अपनी थाली सरका देते थे।
ःनरायन सिंह सूख के नर कंकाल हो चले हैं।चौबीस घन्टे बस छत देखा करते हैं।बड़े लायक बच्चे हैं उनके।उसकी पत्नी गठिये की मरीज हैं।नरायन सिंह अब बनारस नही आ पाते हैं।
ये सब पढने के बाद मुझे ऐसा लगता था.जैसे नरायन सिंह और पिताजी एक दूसरे के बिम्ब प्रतिबिम्ब हों।एक का ह्रास दूसरे का ह्रास था।
यवनिकायें उठती ही चली जा रही थीं।बस एक यवनिका का उठना शेष बचा था.जो तेरह अप्रील के प्रचन्ड गर्मी मे पिछले वर्ष उठ ही गया
ःनरायन सिंह अब हमारे बीच न रहे।मुझे निर्धन बनाके चल दिये।मुझे दुख सिर्फ एक बात का है कि न तो मै उसकी अन्तयेष्टि मे जा सका और न ही उसकी तेरही पर।छियालीस वर्षो तक उसने मुझे अपना सम्बल और अपना आदर दिया।वो मुझसे सिर्फ छ वर्ष छोटा था।उसके गुजरने के बाद मेरे पास तुम्हारे चाचा बेचन सिंह हैं।उन्ही से जब तब सुखम दुखम हो जाती है।तुम तो जानते ही हो कि तुम्हारे दादा के गुजर जाने के बाद बस मुझे अपने जीवन मे दो ही व्यक्तियों का सम्बल मिला।इनमे से एक मुझे छोड़ कर चला गया।
पिताजी की भाषा और उनके भाव के बीच का तालमेल कुछ ज्यादे ही विछिन्न हो चला था।उनके पत्र अतारतम्य होते जा रहे थे या हो चले हैं।अब उनके पत्रों की लिखावट भी मोतियों जैसी न रह गई है।
मुझसे मेरे इकतालीस वर्षीय जीवन मे नरायन सिंह का एक अल्पांश तक न टकराया।उम्र के साथ इन्सान थोड़ा व्यक्तिनिष्ठ होने लगता है.परन्तु मै अपने वस्तुपूरक स्वभाव या उसके कोण से नरायन सिंह को तब से देखता रहा.जब से मुझमे सम्बन्धों की क्लिष्ट भाषा जानने की अभिप्सा जगी।
नरायन सिंह का चरित्र और व्यवहार तमाम विधियों से आई लक्ष्मी तक बदल न पाई।लक्ष्मी जी के अलावे दूसरे देवी देवता भी हमारी धरती पर जीते हैं।धन सर्वोपरी नही हैः शायद यही नरायन सिंह को अपने जीवन मे प्रमाणित करना था.जो वो कर भी गए।

प्रमोद कुमार सिंह